विद्वान और पण्डित

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

विद्वान वह होता है जो ग्रन्थों का अध्ययन करता है और ज्ञान प्राप्त करता है। शास्त्रों के अध्ययन से मनुष्यों की बुद्धि प्रौढ़ हो जाती है और वह विद्वान हो जाता है। शास्त्रों का अभ्यास करना चाहिए। बार–बार घर्षण करने से पत्थर भी घिस जाता है। मानव जीवन में ज्ञान का बहुत महत्व है। ज्ञान के बिना मनुष्य पशु के समान होता है। विद्या के द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है। विद्या का अध्ययन करके ही आदमी विद्वान् बन जाता है। मानव पंचेन्द्रियों के सहारे ज्ञान प्राप्त करता है। आंख, नाक, कान, त्वचा और जिह्वा मनुष्य के ये पांचों इन्द्रियां अपने–अपने विषयों को ग्रहण करती हैं। इसके अतिरिक्त मन हर इंन्द्रियों के साथ संयुक्त होकर के ज्ञान प्राप्त कराता है। मन के ऊपर बुद्धि है बुद्धि का कार्य है निश्चय करना। बुद्धि अन्य जीवों में नहीं पायी जाती। यह मनुष्य का असाधारण धर्म है। बाह्य विषयों का ज्ञान मन सहित इंन्द्रियों के द्वारा प्राप्त होता है। मन का कार्य है वर्तमान भूत और भविष्य के बारे में चिंतन करना। मन बुद्धि को सामग्री प्रदान करता है और बुद्धि वस्तु के स्वरूप का निर्णय करती है।

बुद्धिमान व्यक्ति शास्त्रों का अध्येता होता है और अपने ज्ञान का वितरण कर लोगों को भी ज्ञानी बनाता है। एक कहावत है कि ज्ञान कंठा और दाम अंठा अर्थात् ज्ञान वही है जो कंठस्थ रहें और दाम पास में रहे तो वही अपना है। पुस्तक में लिखी हुई विद्या समय आने पर कार्य नहीं करती। यदि विद्या का अध्ययन किया जाता है तभी वह मस्तिष्क में बैठती है। इसलिए विद्वान् लोग शास्त्रों का चिंतन, मनन और निदिध्यासन करते है। ऐसा ज्ञान ही लोगों के कल्याण के लिए होता है। ज्ञान होने पर अहंकार नहीं होना चाहिए। जिस प्रकार से वृक्ष फल आने पर झुक जाता है वैसे ही ज्ञान सम्पन्न होने पर मानव को झुक जाना चाहिए। विद्वान् व्यक्ति बाह्य जगत में जीता है। बाहरी जगत के वातावरण से वह प्रभावित होता है। क्रोध, मान, माया, लोभ इत्यादि उसको प्रभावित करते है। इसलिए भेदभाव का प्रभाव उसमें रहता है।

विद्वान् व्यक्ति दूसरों को ज्ञान देकर उनको भी विद्वान् बनाता है। विद्वान् उसे नहीं कहा जा सकता जो अपने ज्ञान का वितरण समाज में न करें। जहां तक पण्डित की बात है पण्डित

उसे कहते है जिसकी अन्तः प्रज्ञा जागृत हो जाती है। अन्तः प्रज्ञा ज्ञान की सर्वोच्च सीमा है। ऐसा पण्डित दूसरों को न तो धोखा दे सकता है, न तो छल–कपट कर सकता है। प्रज्ञा के स्तर पर मानव में समता का भाव जागृत हो जाता है। अतः स्व और पर का भेद समाप्त हो जाता है। ऐसा गुण संतों में देखनो को मिलता है। संत वही होता है जो समद्रष्टा हो। प्रज्ञा के चक्षु का प्रकाश बड़ा ही दिव्य होता है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने प्रतिष्ठित प्रज्ञावान का वर्णन दिया है। ऐसे व्यक्ति को प्रज्ञा चक्षु कहा जाता है। वह ऐसा व्यक्ति आंख बंद कर लेने के बाद भी सत्य का साक्षात्कार करता है। प्रज्ञावान व्यक्ति आत्मा के स्तर पर जीता है। आत्मचिंतन करता है। उसकी वृत्तियां अन्तर्मुखी हो जाती है। सामान्य व्यक्ति की दृष्टि में पण्डित ज्ञानी मनुष्य को कहते है। ज्ञानी मनुष्य ही विद्वान् कहलाता है और ब्राह्मण भी वेदों का सांगोपांग ज्ञान रखने वाले विद्वान् व पण्डित को ही कहते है। पण्डितों का मुख्य कार्य देश व समाज में अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि करना होता है। यह कार्य अशिक्षितों व बालक बालिकाओं को शिक्षित करके ही किया जा सकता है। इस कार्य को करने वाले पण्डित व विद्वान् ही कहलाते है।

जिसको परमात्मा औ जीवात्मा का यथार्थ ज्ञान हो जो आलस्य को छोड़कर सदा उद्योगी हो, सुख दुःखादि का सहन, धर्म का नित्य सेवन करने वाला हो तथा जिसको कोई पदार्थ धर्म से छुड़ा कर अधर्म की और आकर्षित न कर सके वह पण्डित कहलाता है। ऐसा व्यक्ति धर्म युक्त कर्म को करने वाला होता है, निन्दित और अधर्म युक्त कर्म को कभी नहीं करता, सदैव ईश्वर, धर्म का प्रशंसक व समर्थक होता है। धर्म में उसका दृढ़ विश्वास होता है। ऐसे व्यक्ति को पण्डित कहते है। जो परमेश्वर से लेकर पृथ्वी पर्यन्त पदार्थों को जानकर उनसे उपकार लेने में तन, मन, धन से प्रवर्तमान होकर काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादि अवगुणों से पृथक् रहता है तथा बिना प्रसंग के अनुपयुक्त व्यवहार नहीं करता वही पण्डित कहलाता है।

विद्वान् और पण्डित को तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर यह कहा जा सकता है कि विद्वान् अहंकारी हो सकता है किन्तु पण्डित अहंकारी नहीं होता। पण्डित में ज्ञान के साथ–साथ विनम्रता का होना आवश्यक है। पण्डित किसी को कष्ट नहीं दे सकता। उसकी वृत्तियां बाह्य विषयों से हट कर आत्मा की ओर उन्मुख हो जाती है। किन्तु विद्वान् में यह जरूरी नहीं है

कि वह अन्तर्मुखी हो। विद्वान् बाह्य विषयों से संलिप्त और बाह्य वृत्ति वाला होता है। संसार के सुख दुःख से वह प्रभावित होता है। उसमें राग, द्वेष की भावना होती है। अहंकार प्रदर्शन की प्रवृत्ति भी विद्वानों में देखी गयी है। जिसमें जितनी विद्वता रहती है वह उसका प्रदर्शन करके समाज में अपने प्रभाव को जमाना चाहता है। किन्तु पण्डित में यह प्रवृत्ति नहीं देखी जाती।